ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-2* March- 2021
Innovation The Research Concept

पं. सत्यनारायण शास्त्री विरचित 'भारतदिग्दर्शनम्' महाकाव्य : एक आकलन

Pt. Satyanarayana Shastri's Epic 'Bharatdigardarshanam' Epic: An Assessment

Paper Submission: 01/03/2021, Date of Acceptance: 24/03/2021, Date of Publication: 25/03/2021

बलवन्त सिंह चौहान
सह आचार्य,
संस्कृत विभाग,
डॉ. बी.आर.ए. राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर,
राजस्थान, भारत

सारांश

विद्वन्मूर्धन्य कविवर चूड़ामणि पं. सत्यनारायण शास्त्री राजस्थान के ऐसे साहित्यसर्जक हैं, जिनकी लेखनी संस्कृत काव्यरचना के शिखर स्तर को स्पर्श करती है। सारस्वत साधना में लीन रहने वाले पं. शास्त्री द्वारा रचित दो महाकाव्य 'श्रीभारतदिग्दर्शनम्' और 'रामाश्वमेधीयम्' हैं। इनके प्रसिद्ध खण्डकाव्य 'रामप्रिया' और 'नवोढ़ाविलास' संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध हैं। इस शोध आलेख में शास्त्री रचित 'श्रीभारतदिग्दर्शनम्' महाकाव्य का आकलन किया गया है। 13 सर्गीय 1549 पद्यों में निबद्ध कालजयी महाकाव्य में किसी महापुरुष अथवा राजवंश का वृत्तान्त न होकर स्वातन्त्र्योत्तर भारत की यथार्थ घटनाओं से राष्ट्रवासियों को अवगत करवाना है। करुणरस प्रधान इस कृति में भारत–भूमि की दुर्दशा, निर्वस्त्र दीन–हीन शिशुओं की यथार्थ स्थिति, तुर्कों द्वारा भारत में किये गये अत्याचार, भारतीय समाज में फैले वृद्ध विवाह, बाल–विवाह, विद्यार्थियों की उद्दण्डता, हिन्दू नारियों की दुर्दशा व हिन्दू समाज की विकृत मनोवृत्ति प्रभृति वर्णन चित्रित किये गये हैं। शास्त्री जी ने महाकाव्य में प्रकृति के असीम सौन्दर्य की अनुभूति को शब्दों के माध्यम से कमनीय अभिव्यक्ति दी है। महाकाव्य में शब्द रूपी पद भावों के नूपुरों को बाँधकर थिरकते हुए अपनी समधुर ध्वनि से सहृदय पाठकों में आनन्द की सृष्टि करने वाले हैं। शास्त्री जी ने जीवन–मूल्यों में हो रहे ह्रास और गिरते मानवीय मूल्यों को अपनी लेखनी का विषय बनाकर राष्ट्रोत्थान हेतु राष्ट्रवासियों को सचेत किया है।

Pt. Satyanarayana Shastri is a writer of Rajasthan whose writings touch the peak level of Sanskrit poetry. There are two epics 'SriBharatadigdarshanam' and 'Ramashvamedhiyam' composed by Pt. Shastri, who is engaged in Saraswat Sadhana. His famous Khandakavya 'Rampriya' and 'Navodhavilas' are famous in Sanskrit literature. In this research article, the epic of Sri Sharadadigdarshanam, composed by Shastri, has been assessed. In the 1349 verses composed in the 13th century, the nationalists have to be apprised of the true events of post-independence India, rather than a legend of a great man or flamingo in the epic.

मुख्य शब्द : पिशाचपुञ्ज, मृणालिनी, नवबालावदनम्, नवतारुण्यम्, अतिगह्वरे, निकामघोर, समाजशृंखला, किरणावलीम्, सुतप्तहेम्ना।
Vampires, Mrinalini, Navabalavadanam, Navtarunyam, Atiagahvare, Nikamghor, Society, Kiranavalyam, Sutaptahemna.

प्रस्तावना : कथावस्तु

13 सर्गीय 1549 पद्यों में निबद्ध कालजयी क्रान्तिकारी महाकाव्य 'भारतदिग्दर्शनम्' किसी महापुरुष अथवा राजवंश का वृत्तान्त न होकर स्वातन्त्र्योत्तर काल की यथार्थ घटनाओं पर आधारित है। प्रथम सर्ग का प्रारम्भ लक्ष्मी देवी की स्तुति से किया गया है। इसमें महाकाव्य की नायिका 'भारत माता' के भवन, भारत–भूमि की दुर्दशा, किसानों की दयनीय स्थिति, शिक्षालयों में फैले व्यभिचार तथा तुर्कों द्वारा किये जा रहे भीषण अत्याचारों का वर्णन किया गया है। द्वितीय सर्ग में किसानों की दरिद्रावस्था, जीर्ण–शीर्ण वस्त्रों वाली स्त्रियों, अतिवृष्टि से नष्ट हुई फसलों व निर्वस्त्र बालकों की दुर्दशा देखकर भारत माता करुणा से भर उठती है। तृतीय सर्ग में मध्याह्न वर्णन, सुरभि द्वारा भारत माता को

गायों की दुर्दशा का वर्णन करना, तुर्कों द्वारा गायों पर किये जा रहे अत्याचारों को सुनकर भारत–माता का व्यथित होना वर्णित है। चतुर्थ सर्ग में हिन्दू नारी की दुर्दशा वर्णित है। इसमें कुल वधुओं की स्थिति क्षय से पीड़ित रोगिणी के समान बताई गई है। पञ्चम सर्ग में षड्ऋतुवर्णन, नारदमुनि द्वारा भारत माता को विद्वानों के हो रहे निरादर का वर्णन करुणामयी रूप में किया गया है। षष्ठ सर्ग में नारद द्वारा भारत माता को चारों वर्णों और चारों आश्रमों में जीवन व्यतीत करने वालों की दुरवस्था का चित्रण किया गया है। सप्तम सर्ग में भारतीय समाज में फैली वृद्ध विवाह, बाल विवाह, कन्या विक्रय, विद्यार्थियों की उद्दण्डता, विश्वनाथ भगवान की पुरी काशी का हृदयहारी वर्णन किया गया है। अष्टम सर्ग में बंगाल में पड़े भीषण अकाल से पीड़ित भूखों का, नवम सर्ग में तुर्कों द्वारा हिन्दुओं पर किये जा रहे भीषण अत्याचारों तथा यवनों द्वारा पीड़ित बालिका के करुण क्रन्दन का मार्मिक चित्रण किया गया है। दशम सर्ग में पञ्जाब की प्राकृतिक शोभा से मुग्ध भारत माता का अमृतसर आगमन, मुसलमानों द्वारा सिक्खों पर किये गये अत्याचारों का, मुस्लिमों के कुटिल आचरण से क्षुब्ध सिक्ख स्त्रियों की वीरोक्ति का वर्णन मिलता है। एकादश सर्ग में सूर्योदय वर्णन, पति से वियुक्त नव वधुओं का करुण क्रन्दन, सम्बन्धियों द्वारा किये गये दुराचारों और हिन्दू समाज की विकृत मनोवृत्ति का चित्रण किया गया है। द्वादश सर्ग में सूर्यास्त, चन्द्रोदय, चन्द्रास्त का मनोहारी चित्रण किया गया है। त्रयोदश सर्ग में कोकिला भ्रमर वर्णन, भारत विभाजन और भारत माता का विषाद चित्रित है। प्रस्तुत महाकाव्य परस्पर असम्बद्ध अनेक घटनाओं को अपने भीतर समाहित किये हुए है। सम्पूर्ण महाकाव्य का काव्यत्व एवं घटनाचक्र एक–दूसरे के पूरक हैं। कवि की कथानक सम्बन्धी धारणा शास्त्रीय लक्षणों का निर्वाह करने वाली है।

शोध उद्देश्य

1. महाकाव्य का प्रतिपाद्य विषय निम्न समाज की व्यथित, अभावग्रस्त व उपेक्षित स्थिति से राष्ट्रवासियों को अवगत करवाकर राष्ट्रोत्थान हेतु सचेत करना है।
2. राष्ट्र की एकता एवम् अखण्डता हेतु भारतीयों के शीतल रक्त में ऊर्जा संचरित कर राष्ट्र का विकास करना है।
3. साहित्य की विधा, विशेषकर महाकाव्य के लक्षणों से परिचित करवाना।
4. साहित्य के भावपक्ष व कलापक्ष की बारीकियों का अध्ययन कर रहे शोधार्थियों और अध्येताओं को साहित्य सृजन के प्रति उन्मुख करना।
5. साहित्य में श्रीवृद्धि करना तथा नवसृजन की प्रेरणा देना।
6. अध्येताओं और शोधार्थियों को उपजीव्य काव्य से अवगत करवाना ताकि उसे पढ़कर वे विपरीत परिस्थितियों में धैर्य धारण करने, प्रेम, सहिष्णुता, कोमलता, उदारता, कर्तव्यनिष्ठा, सदाचार आदि अनेकविध मानवीय मूल्यों को आत्मसात् कर सकें।
7. पाठकों और शोधार्थियों को भोगवादी संस्कृति के विरुद्ध त्यागमय व तपमय जीवन जीने की प्रेरणा मिल सके।
8. लोक व्यवहार का ज्ञान, इन्द्रिय–निग्रह, गुरु सम्मान, यज्ञ महत्ता, नारी सम्मान, भारतीय संस्कृति की रक्षा प्रभृति आदर्शों से अध्येताओं और शोधार्थियों को अवगत करवाना।

रस योजना

आचार्यों द्वारा महाकाव्य हेतु दिये गये अङ्गीरस विषयक लक्षण 'शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते'[1] की लक्ष्मण रेखा से हटकर कविवर ने महाकाव्य में करुण रस को अङ्गीरस के रूप में चित्रित किया है। महाकाव्य में समाज के उपेक्षित व उत्पीड़ित वर्ग की दैन्य उद्भूत करुणा का महानद काव्य की नायिका 'भारती' को भी अन्तस्ताप से पीड़ित कर देता है। कवि ने चतुर्थ सर्ग में नारी दुर्दशा का बड़ा ही करुण चित्रण किया है। शारीरिक, सामाजिक एवं मानसिक दृष्टि से महिलाओं द्वारा कितना कारुणिक जीवन व्यतीत किया जाता है इसका सजीव और मार्मिक चित्रण कवि ने करते हुए लिखा है कि नव यौवनाओं के शरीर को कठोर हस्तप्रहार से प्रताड़ित किया जा रहा है। जलते हुए लोहे से उनके शरीर के कोमलांगों को जला दिया जाता है। स्त्रियों के कोमल तनु को खौलते पानी से सींच दिया जाता है और तीक्ष्ण सूइयों के अग्रभाग से उनका शरीर बेध दिया जाता है –

अशनिप्रभमुष्टिवर्षया नवबालावदनं विचूर्ण्यते।
अथवा भृशतृप्तलौहतः सकलाङ्गं विदयं विदह्यते।।
अतितप्तजलेन सिच्यते शितसूच्यग्रमुखैश्च विध्यते।
वनितावरविग्रहो विधे! नवतारुण्यविभाविभासितः।। [2]

उपर्युक्त पद्यों में नारी आलम्बन विभाव है और नारियों पर हो रहे अत्याचार जैसे प्रताड़ना, लोहे के टुकड़ों से जलाना, खौलता हुआ पानी डालना, सूइयाँ चुभाना आदि उद्दीपन विभाव हैं। स्त्रियों का व्याकुल होना अनुभाव है तथा ग्लानि, विषाद, दैन्य आदि सञ्चारी भाव है। नारी जीवन की इस मर्मस्पर्शी अवस्था को व्यक्त करने वाले इन विभावों, अनुभावों एवं संचारी भावों से परिपुष्ट होता हुआ पाठकों के हृदय में अवस्थित 'शोक' नाम स्थायी भाव 'करुण' रसत्व को प्राप्त हो रहा है।

इसी प्रकार एकादश सर्ग में पति वियुक्ता विधवा नारी का विलाप सुनकर भी मानव शोक विह्वल हो उठता है। अपने मृत पति को सम्बोधित करती हुई उसकी पत्नी कहती है कि हे प्रिय वल्लभ! तुम अपनी तरुण अवस्था वाली प्रिय पत्नी को असमय में ही निराश्रित छोड़कर कहाँ चले गये हो? अपनी पत्नी के रुदन एवम् आकुल अश्रु कणों से युक्त मुख को पौंछने के लिए क्या तुम शीघ्र नहीं आओगे। जिस बालक को वात्सल्य के वशीभूत होकर आप धूल व मिट्टी से भरे हुए होने पर भी बार–बार स्नेहिल भाव से चूम लेते थे, उस प्रिय शिशु को देखकर आज हृदय फटा जा रहा है।

पते पते वल्लभ! कुत्र हा गतः प्रियां परित्यज्य निरागसं तव।
प्ररूढ़तारुण्य तरङ्गादोलितामकाल एवाद्य निराश्रयामिमाम्।। [3]
सुकान्त! हे वल्लभ हे सुखालय प्रियेश हे जीवनमित्र! हे गुरो!
न किं रुदत्या नयनाम्बुमालिकामपाकरोषीह समेत्य वेगतः।। [4]
दुनोति चित्तं न कथं प्रियव्रत! प्रियः शिशुस्ते परिदेवयन्नयम्।

मुहुर्मुहुः स्नेहवशेन चुम्बितो विधाय चोऽङ्के रजसाञ्चिताननः।।[5]

यहाँ पति आलम्बन विभाव है। पति के गुणों, पुत्र के प्रति उसके स्नेह एवं अन्य विशेषताओं तथा पूर्व घटनाओं आदि का स्मरण उद्दीपन विभाव है। पत्नी द्वारा किया गया रुदन, प्रलापादि अनुभाव हैं तथा आवेग, दैन्य, विषाद आदि सञ्चारी भाव हैं। यहाँ उद्दीपन विभावों से विभावित, अनुभावों से परिपोषित तथा व्यभिचारी भावों से भावित होने वाला 'शोक' नामक स्थायी भाव करुण रसत्व को प्राप्त हो रहा है। इसके अतिरिक्त कविवर ने अपनी कृति में अङ्ग रस के रूप में शृंगार, हास्य, रौद्र, वीर, भयानक आदि रसों का भी चित्रण किया है।

चरित्र–चित्रण

चरित्र–चित्रण की दृष्टि से शास्त्री जी ने काव्य में समाज के उपेक्षित वर्ग का विशेषतः चित्रण किया है। कृषक की निर्धनता एवं अभावग्रस्तता का चित्रण करते हुए लिखा है कि कृषक के मिट्टी से बने घर पर छत तक नहीं है। अन्न उत्पन्न कर सम्पूर्ण संसार का पालन करने वाला किसान अपना पेट भरने तक के लिए समर्थ नहीं है। आश्चर्य की बात है कि रत्नों से भरे हुए खजाने वाला राजा भी दरिद्र हो गया है।

अलमहो! न निजोदरपूरणे सकलसंसृतिपालनतत्परः।
विपुलरत्नाकरो धरणीश्वरो भजन्ति हन्त! तदा सुदरिद्रताम्।।[6]

किसान की दरिद्र गृहिणी अपने बच्चों की सामान की इच्छापूर्ति तक नहीं कर पाती है। अपनी लज्जा छिपाने के लिए उसके पास वस्त्र तक नहीं है। पेट पालन की समस्या ही उसके सम्मुख ज्वलंत समस्या बनी हुई है। जो स्त्री सौन्दर्य, सौभाग्य और सम्पदा की उज्ज्वल निधि रही है, उसे आज अपने शरीर के मल शोधन का भी समय नहीं मिलता है। जिस नारी ने कभी अपने वैदुष्य से बड़े–बड़े पण्डितों का दर्प चूर्ण कर दिया था, वह आज कुशिक्षा और अशिक्षा से व्यथित दिखाई दे रहा है।

अभवच्च कदापि या श्रियः परमः कोष इहाधुना न सा।
स्वशरीरमलस्य शोधने समयं विन्दन्ति वामलोचना।।
विदुषी बुधदर्पनाशिनी भुवि याऽभूद् भुवनैकमानिता।
बत। सैव कुशिक्षयाऽधुना व्यथिता भारतभूमिभामिनी।।[7]

कविवर ने महाकाव्य में नारी को अनेक रूपों में चित्रित किया है। समाज द्वारा शोषित और प्रताड़ित नारी, विधवा नारी, विरहिणी नारी और नारी ओजस्विता को प्रमाणित करने वाली वीर सिक्ख रमणी आदि। आज कुशिक्षा से हीन चरित्र वाली नारियाँ भी भीरू और वाचाल सन्तानों को जन्म दे रही हैं। पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा स्त्री स्वयं को एकांकी एवं उपेक्षित अनुभव करती है। वह अपनी सन्तान की रक्षा में भी स्वयं को असमर्थ पाती है। अपने आत्म सम्मान को खोकर नूपुरों की झंकार से मनुष्यों को मोहित करती हुई आर्य समाज को भी कलंकित करती है –

झणद्रणन्नूपुरमेखलास्वनैः विलोलरम्याङ्घ्रिनितम्बशालिनी।
अमोहयत् सा मनुजातमानसं कलङ्कयन्त्यार्यसमाज–नाम हा।।[8]

प्रकृति चित्रण

महाकाव्यीय परम्परा के अनुसार कविवर शास्त्री ने सूर्य, चन्द्र, नदी, जलक्रीड़ा, प्रातः, मध्याह्न, संध्या, ऋतु और उपवनादि का वर्णन भी अपनी कृति में प्रचुर मात्रा में किया है। कवि ने अपने पात्रों की करुणा में समस्त प्रकृति को ही सम्मिलित कर लिया है। नौआखली और पञ्जाब हत्याकाण्ड के शिकार स्त्रियों और बालकों के करुण क्रन्दन से सम्पूर्ण प्रकृति भी करुणा के सागर में डूब गई।

विनाशिता मे निखिलापि सम्पदा पिशाचपुञ्जैरपकारतत्परैः।
निशम्य सा तीव्रमनोव्यथाकुला वसुन्धरा हन्त! भयेन कम्पते।।[9]

प्रकाशयन्त्यः समवेदनां हि यं ध्वनिं वितेनुर्गिरिराजकन्दरा।
जनेन सोऽद्यापि निशम्यते स्फुटं विगाहमानेन घनं वनान्तरम्।।[10]

सहानुभूत्यै क्रुशितेन सत्वरं प्रविश्य चित्तं श्रुतियुग्मवर्त्मना।
जडीकृताः केवलमीक्षणोन्मुखा स्वनाम चक्रुः पशवोऽपि सार्थकम्।।[11]

एकादश सर्ग में सूर्योदय का अत्यन्त मनोहारी चित्रण कविवर ने किया है। प्रिय के हाथ का स्पर्श पाकर मृणालिनी हर्ष से प्रफुल्लित हो उठती है –

करस्य सम्पर्कमिवाप्य कोमला मृणालिनी मीलितशालिनी तदा।
निधाय चित्ते दयितस्य कोमलं स्फुटाऽभवत् पाणिममन्दहर्षतः।।[12]

वर्षा ऋतु में बादलों की गड़गड़ाहट सुनकर चित्तवृत्ति कैसी हो जाती है, इसका निदर्शन इस प्रकार द्रष्टव्य है –

श्रुत्वाम्बुमुग्जलधरस्य निकामघोर,
मुच्चैस्तरं त्वहह! गर्जनमेकतानम्।
प्रयोवियुक्तपरिविह्वलचित्तवृत्या,
रोमोद्गमः सपदि किंस्विदभूद् धरण्याः।।[13] **5/11**

चन्द्रास्त का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि कलाओं का स्वामी चन्द्रमा अपनी किरणों को भूमण्डल पर प्रसारित करने के कारण परिश्रम से चूर–चूर होकर अपनी प्रसारित किरणों को समेटकर पृथिवी को गहन अंधकार में विलीन कर सोने के लिए प्रस्थान कर रहा है –

समस्त भूमण्डलविस्तृतान् करान् स सङ्कोच्य कलाधरोऽयते।
परिश्रमाऽऽखिन्नवपुर्धराधृतोऽतिगह्वरे स्वप्नमुपासितुं ध्रुवम्।।

इस प्रकार शास्त्री जी ने प्रकृति के असीम सौन्दर्य की अनुभूति को शब्दों के माध्यम से कमनीय अभिव्यक्ति दी है।

भाषा शैली

वहीं शास्त्री जी का शब्द–विन्यास जितना चमत्कारपूर्ण है, उतनी ही भावाभिव्यक्ति भी सरल और सबल है। प्रस्तुत काव्य की भाषा में शब्द रूपी पद भावों के नूपुरों को बाँधकर थिरकते हुए अपनी सुमधुर ध्वनि से पाठकों के ह्रदय में आनन्द की सृष्टि करते हैं। कवि की भाषा सरल, मधुर व कोमलकान्त पदावली से युक्त है। प्रसाद गुण गुम्फित काव्य में व्याकरण अथवा इतर शास्त्रों के दुर्बोध शब्दों का कविवर ने प्रयोग नहीं किया है। लौकिक घटनाओं, ग्राम्य जीवन, नारी दुर्दशा, कुरीतियों, दुर्भिक्ष तथा साम्प्रदायिक दंगों प्रभृति वर्णनों में भी कवि की भाषा प्रवाहमयी है। नारी की दुर्दशापूर्ण स्थिति का चित्रण करते हुए कहते हैं कि आज नारी अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों को केवल निरीह दृष्टि से देख रही है। उसे

प्रतिरोध करने का कोई अधिकार नहीं है। आज नारी पशुवत् है। उसके गले में समाज की शृंखला बँधी हुई है और उसे नरकलंकों द्वारा पीड़ा पहुँचाई जा रही है। कवि का यह पद्य कितना मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी है –

प्रमदा पशुरद्य विद्यते गलबद्धास्ति समाजशृङ्खला।
विविधैर्विधिमिर्निपीड्यते नृकलंकैः स पदे पदे बत।।[14]
अमला न पटा वपुर्धृता अपि लिक्षाव्यथिताः शिरोरुहाः।
समलं पदपाणि सव्रणं निरतं भाण्डविशोधनेन हा।।[15]

इस प्रकार आलोच्य महाकाव्य में यत्र–तत्र प्रसादगुण का प्राचुर्य ही दिखाई पड़ता है। कविवर ने 'भारतदिग्दर्शनम्' कृति में छन्द परम्परा का भी समीचीन निर्वाह किया है। सर्ग के अन्त में छन्द परिवर्तन की परिपाटी का भी अनुकरण किया गया है। मुख्य रूप से महाकाव्य में वंशस्थ, द्रुतविलम्बित, उपजाति, वियोगिनी, वसन्ततिलका, अनुष्टुप् आदि छन्दों का ही प्रयोग किया है। काव्य के सौन्दर्याधायक तत्त्वों में अलङ्कारों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। कवि ने अपनी कृति में अनेकविध अलङ्कारों का प्रयोग किया है तथापि कवि का प्रिय अलङ्कार उत्प्रेक्षा है। यहाँ एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

मनोरमा भानुतनूः समन्ततो विकीर्य मञ्जुं किरणावलीं शुभा।
उदञ्चमानोदयशैलशेखरात् सुतप्तहेम्नाऽऽरचितेव भासते।।[16]

यहाँ कवि सूर्योदय का वर्णन करते हुए कह रहे हैं कि उदयाचल के उच्च शिखर से उदय होता हुआ सूर्य अपनी प्रकाशमयी किरणों का विकीरण करके लोहितमयी पीलिमा से ऐसा शोभायमान हो रहा है मानो वह सुतप्त सुवर्ण से रचित हुआ हो।

एक रूपक अलंकार का उदाहरण यहाँ दिया जा रहा है–

विरहार्त्तवधूरुषानलोर्ध्वशिखादाहभयं विचिन्तयन्
विधुराश्रयतीव सत्वरं पितरं शीतजलेन भूषितम्।।[17]

अर्थात् कान्त के विरह में कामिनियों के लिए चन्द्रमा अत्यन्त दुःखदायी होता है। इसलिए वे क्रोध से उसे कोसती रहती हैं। उनके क्रोध रूपी अग्नि की लपटों से जल जाने के भय से डरकर ही वह मानो शीतल जल से भूषित अपने पिता समुद्र की शरण में जा रहा है। यहाँ 'रुषानल' पद में रूपक अलंकार है।

राष्ट्र–सन्देश

आलोच्य महाकाव्य में धर्म का एक व्यापक स्वरूप परिभाषित हुआ है। कवि ने राष्ट्रवासियों के जीवन–मूल्यों में हो रहे ह्रास, स्वार्थपरक सामाजिक जीवन, मानवीय मूल्यों के गिरते स्तर, समाज की दयनीय स्थिति, समाज के उपेक्षित वर्ग की अन्तर्व्यथा, राष्ट्रवासियों की अवनति के कारणों को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। महाकाव्य में राष्ट्रीयता का सन्देश कहीं व्यक्त रूप में तो कहीं अव्यक्त रूप में परिलक्षित हो रहा है। कविवर ने भारत के अद्यःपतन का कारण विदेशी शासन को भी माना है।

निपापिता यत्पदयोस्तु निघ्नता भरा विदेशीयनृपेण शृंखला।
तनोति या तस्य मनोज्ञविग्रहे प्रकामधोरार्तिकरीं
व्रणावलीम्।।[18]

विदेशजैर्बद्धपदस्य तस्य सा गता विनाशं गुरुता महोमयी।
यया सुसभ्यं विषयान्तरं व्यधान्मनोज्ञविज्ञानकलाधुरन्धरम्।।[19]

निष्कर्ष

इस प्रकार संस्कृत साहित्य की यह क्रान्तिकारी रचना समाज के दीन–हीन पात्रों की करुण कथा को अपने में सँजोए हुए है। संस्कृत काव्यों की प्राचीन व आधुनिक शैली के रमणीय समन्वय से युक्त एक रोचक व सार्थक रचना है। महाकाव्य में कवि का राष्ट्रीयता का स्तर तो मुखरित हुआ ही है, साथ ही कवि प्रत्येक देशवासी को देश की रक्षा व कल्याणार्थ उत्प्रेरित करता हुआ अपनी प्राचीन गौरवपूर्ण परिपाटी को बचाए रखने का सन्देश देती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *सा.द. षष्ठ परिच्छेद 317*
2. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 4/73*
3. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 11/39*
4. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 11/55*
5. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 11/56*
6. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 2/8*
7. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 4/16–17*
8. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 11/125*
9. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 1/85*
10. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 1/86*
11. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 1/87*
12. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 11/5*
13. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 5/11*
14. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 4/76*
15. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 4/78*
16. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 11/2*
17. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 12/107*
18. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 1/57*
19. *भारतदिग्दर्शनम् महाकाव्य 1/58*